संस्कृत B.A., M.A., Ph.D. शास्त्री तथा आचार्य्य छात्रोपयोगी

गद्य लहरी

लेखक

पंडित जमीता रामात्मज कवितार्किक

ज्योतिष शास्त्र निष्णात ॥

पं० ज्ञानचन्द्र शर्मा वेदान्त शास्त्री

*

Publisher

SANSAR CHAND SHARMA

25-C, GREEN PARK, EXTENSION

DELHI.

Price Re. 1-00

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

गुणाढ्य ई० 78

सब से प्राचीन कथा ग्रन्थ गुणाढ्य की बृहत्कथा है यह ग्रन्थ अब अप्राप्य है। बुधस्वामी का 'बृहत्कथाश्लोकसंग्रह' क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामंजरी और सोमदेव का कथासरितसागर यह तीनों ग्रन्थ बृहत्कथा के संक्षिप्त रूप हैं। शिव पार्वती को एक कथा सुना रहे थे। वह कथा उनके एक शिष्य पुष्पदन्त ने सुन ली। पार्वती ने उसको शाप दिया, उसका भाई माल्यवान् बीच में अपने भाई की ओर से कुछ कहने लगा। उस पर पार्वती ने उसे भी शाप दे दिया। पुष्पदन्त को यह शाप दिया कि वह मनुष्य के रूप में उत्पन्न हो और दानव काणभूति को यह कथा सुना कर पुनः अपनी पूर्व अवस्था को प्राप्त होगा। माल्यवान् को यह शाप दिया कि वह भी मनुष्य के रूप में उत्पन्न होगा और दानव काणभूति को यह कथा सुना कर अपनी पूर्व अवस्था को प्राप्त होगा। तदनुसार पुष्पदन्त प्रसिद्ध वैय्याकरण एवं नन्द राजाओं के मन्त्री वररुचि के रूप में उत्पन्न हुए। जीवन के अन्तिम दिनों में वह विन्ध्याचल के बन में गये। वहां काणभूति को यह कथा सुनाई और अपनी पूर्व अवस्था को प्राप्त हुए। माल्यवान् गुणाढ्य के रूप में उत्पन्न हुए और वह प्रतिष्ठान के राजा सातवाहन का मन्त्री हुआ। राजा संस्कृत नहीं जानता था। एक समय जलक्रीड़ा में जल के छींटों से त्रस्त होकर स्त्रियों ने सातवाहन से कहा 'मोदकं देहि राजन्' अर्थात् राजन् पानी मत फैंको। परन्तु सातवाहन संस्कृत भाषा में निपुण न होने के कारण समझा कि लड्डू मांगती हैं और यह समझ कर उनको लड्डू दिये। इस पर सब स्त्रियां हंसने लगीं। वह अन्तःपुर में रानियों के पास जाने से लज्जित होता था क्योंकि

उनमें से कुछ संस्कृत अच्छी तरह जानती थीं। उसने अपने दरबारी पण्डितों को इसलिये इकट्ठा किया कि वह उसे संस्कृत कम से कम समय में और कम से कम परिश्रम से कौन सिखला सकता है। गुणाढ्य ने राजा को संस्कृत सीखने के लिये कम से कम 6 वर्ष का समय बतलाया। इस पर दूसरे विद्वन शर्ववर्मा ने 6 मास में संस्कृत सिखलाने की प्रतिज्ञा की और कातन्त्रव्याकरण की रचना की। इस पर गुणाढ्य ने प्रतिज्ञा की कि वह साहित्यिक कार्यों के लिये संस्कृत का प्रयोग नहीं करेगा और उसने राजद्वार छोड़ दिया। वह बन में गया और काणभूति से मिला और उसने उसे वह कथा सुनाई। गुणाढ्य ने वह कथा पैशाची प्राकृत में लिखी। गुणाढ्य के शिष्यों ने यह ग्रन्थ सातवाहन को दिखलाया पर उसने इसे देखना भी अस्वीकार कर दिया।

इस पर गुणाढ्य ने यह ग्रन्थ बन की अग्नि में डाल दिया। उसके शिष्य ग्रन्थ का सातवां भाग बचा सके। संक्षेप में गुणाढ्य और उसके ग्रन्थ की यह कथा है इसमें कौशाम्बी के राजा उदयन के पुत्र नरवाहनदत्त के पराक्रम का वर्णन है। ई० 600 में दूर्विनीत ने गुणाढ्य की बृहत्कथा को संस्कृत में रूपान्तर किया। गुणाढ्य का आश्रयदाता सातवाहन आन्ध्रभृत्य राजाओं में से था। गुणाढ्य ने पैशाची प्राकृत का प्रयोग किया है। यह पैशाची प्राकृत विन्ध्यप्रदेश के समीप की है। पाश्चात्य विद्वान् पैशाची भाषा को पश्चिमोत्तर प्रदेश में बोली जाने वाली मानते हैं। इसमें एक लक्ष पद्य थे जो अब उपलब्ध नहीं होते। मूल कृति गद्य में थी या पद्य में इस विषय में मतभेद है। काश्मीर की जनश्रुति के आधार पर बृहत्कथा श्लोकबद्ध थी किन्तु काव्यादर्श में दण्डी ने इसको गद्यात्मक बताया है। गुणाढ्य ने अपने समय की प्रचलित अनेक लोक कथाओं को संगृहीत कर बृहत्कथा की रचना की। जिस

प्रकार नीति कथाओं में पंचतन्त्र का स्थान सर्वोपरि है उसी प्रकार लोक कथाओं में बृहत्कथा का स्थान अग्रगंण्य है। रामायण और महाभारत के समान बृहत्कथा भी भारतीय साहित्य की एक अपूर्व निधि थी। उसकी कथाओं के आधार पर संस्कृत के कई ग्रन्थों का निर्माण हुआ। [1]बाण ने बृहत्कथा को हरलीला के समान बताया।

विष्णुशर्मा ई० 200

इसका विरचित पञ्चतन्त्र नामक कथा या आख्यायिका ग्रन्थ है। दक्षिण देश में महिलारोप्य नामक नगर था। वहां अमरशक्ति नाम राजा राज्य करता था। उसके मूर्ख तीन पुत्रों को पढ़ाने के लिये विष्णुशर्मा नियुक्त हुए। विष्णुशर्मा नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र और कामादि शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान थे, ऐसा पंचतंत्र के कथामुख में वर्णन है। परन्तु इतिहास में राजा अमरशक्ति का कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। Hertel पंचतन्त्र की रचना काश्मीर में हुई ऐसा मानता है क्योंकि उसमें हरिण और व्याघ्र का वर्णन बहुत कम है। काश्मीर में ये दोनों जानवर नहीं मिलते। यद्यपि विष्णुशर्मा और उसकी जन्मभूमि के सम्बन्ध में कोई निश्चय नहीं किया जा सकता तो भी इस ग्रन्थ की प्राचीनता के कई प्रमाण मिलते हैं। 533 ई० में फारस के बादशाह नौशेरवां के दर्बार में एक हकीम थे जिमका नाम बुरजोई Burjoi था। यह संस्कृत के ज्ञाता थे। इन्होंने पंचतन्त्र का प्रथम अनुवाद पहलवी भाषा (प्राचीन फारसी) में किया। इसके बाद सीरिया और अरबी भाषा में अनुवाद हुआ।

---

[1]समुद्दीपितकन्दर्पा कृतगौरी प्रसाधना।
हरलीलेव नो कस्य विस्मयाय बृहत्कथा॥

पञ्चतन्त्र :—इसको पञ्चोपाख्यान भी कहते हैं। यह गद्य-पद्यात्मक चम्पू ग्रन्थ है। इसमें (1) मित्रभेद (2) मित्रसंप्राप्ति (3) काकोलूकीय (4) लब्धप्रणाश (5) और अपरीक्षितकारक इन पांच तन्त्रों में विभक्त है। यथार्थ में इस ग्रन्थ के नाम का पता ही नहीं चला।

आर्यशूर ई० 300

यह बौद्धों के प्रसिद्ध ग्रन्थ जातकमाला का रचयिता है। इसमें बुद्ध का चरित दन्तकथा के रूप में बड़ी ही सुन्दर रीति से वर्णित है। यह कथायें संस्कृत काव्य में लिखी गई हैं। इस काव्य में अश्वघोष का अनुकरण है। जातक ग्रन्थों से इसकी कथायें ली गई हैं। पाली जातकों में हीनयान ग्रन्थ का वर्णन मिलता है परन्तु आर्य्यं शूर के काव्य में हीनयान के साथ २ महायान का भी वर्णन है। इस काव्य की प्रथम कथा जो बोधिसत्व के सम्बन्ध में है जातक ग्रन्थों में नहीं पाई जाती। इत्सिंग नाम का चीनी यात्री सप्तम शतक के अन्तिम पाद में (671-694) भारत में आया था। उस समय उसके कथनानुसार यह जातकमाला काव्य बौद्धों को बड़ा ही प्रिय था। अजन्ता की शिलाओं पर इस काव्य के श्लोक और कथा चित्र खुदे हुए हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि अजन्ता की शिलाओं पर चित्र लिखे जाने के समय यह ग्रन्थ पूर्णतया प्रसिद्ध था। इस ग्रन्थ का चीनी भाषा में अनुवाद ई० 434 में हुआ।

जातकमाला यह गद्य पद्यात्मक ग्रन्थ है। इसमें काव्य के अनेक गुण हैं। समस्त पदों का प्रयोग गद्य में सर्वत्र मिलता है। ऐसी प्रसिद्धि है कि आर्यशूर ने इन कथाओं की रचना में 'कुमारलात' का अनुकरण किया है। यह पंचतन्त्र के सदृश ग्रन्थ है।

हरिषेण ई० 400

संस्कृत साहित्य के कुछ कवियों का वृत्तांत शिलालेखों पर खुदी हुई प्रशस्तियों के रूप में मिलता है। ऐसे विद्वानों में हरिषेण का नाम पहले आता है। उसका परिचय उनके द्वारा लिखी गई प्रयाग प्रशस्ति से ज्ञात होता है। यह समुद्रगुप्त ई० 400 के आश्रित कवि थे। इन्होंने अपने स्वामी की प्रशंसा में एक लेख 345 ई० में लिखा जो प्रयाग के अशोकस्तम्भ पर आज भी खुदा है। इसको पढ़कर सम्राट समुद्रगुप्त के बल पराक्रम और गुणों का पता चलता है। प्रशस्ति की पुष्पिका (Colophon) से विदित होता है कि उसके पिता का नाम ध्रुवभूति था जो गुप्त नरेशों का महादण्डनायक एवं राजनीति का महान पंडित था। हरिषेण भी अपने पिता की भांति समुद्रगुप्त की सभा का प्रधान पंडित और मन्त्री भी था। प्रयाग प्रशस्ति हरिषेण की काव्य प्रतिभा का उज्ज्वल उदाहरण है। प्रशस्ति का आरम्भ स्रग्धरा छन्द से होता है। छन्दों के अतिरिक्त उसका बड़ा हिस्सा गद्यात्मक है। उसका पद्य कालिदास और गद्य बाण का अनुकरण करता है।

वत्सभट्टि ई० 500

इसकी कीर्ति हमें शिलालेखों द्वारा प्राप्त हुई। वत्सभट्टि की कवित्व प्रतिभा अमर यादगार मन्दसौर प्रशस्ति है जो कि कुमारगुप्त के राज्यकाल ई० 500 में लिखी गई। इस प्रशस्ति में मन्दसौर के रेशम बुनने वालों के चन्दे से ई० 437 में एक सूर्यमन्दिर के निर्माण का हवाला दिया गया है। इस प्रशस्ति का वसन्त और वर्षा

वर्णन बड़ा ही काव्यमय और आकर्षक है । मन्दसौर प्रशस्ति 44 श्लोकों में है । आरंभ के श्लोकों में भगवान् सूर्य्य की स्तुति इसके बाद दशपुर (मन्दसौर का हृदयग्राही वर्णन है । बाद में वहां के तत्कालीन नरपति बन्धुवर्मा ई० 500 की प्रशस्ति वर्णन है । महाकवि कालिदास की भाषा का प्रशस्ति पर स्पष्ट रूप से आभास दृष्टिगोचर होता है ।

सुबन्धु ई० 600

इनका विरचित वासवदत्ता नाम का गद्य काव्यहै । सुबन्धु की वासवदत्ता और बाण की कादम्बरी और [1]हर्षचरित पढ़ने से मालूम होता है कि बाण ने सुबन्धु के ही ढांचे पर अपने गद्य काव्य की रचना की थी । [1]बाण ने श्रीहर्ष के आरम्भ में सुबन्धु की प्रशंसा की है । वाक्पतिराज ने अपने गौड़वहो काव्य में सुबन्धु का निर्देश किया है । कविराज [2] ने भी अपने राघवपाण्डवीय काव्य में सुबन्धु को वक्रोक्ति में निपुण कहा है । ई० 1168 के कर्णाट के शिलालेख में भी सुबन्धु की प्रशंसा की है । यह कविश्लेष [3] का बड़ा ही प्रिय मालूम होता है । वासवदत्ता गद्य में राजकुमारी वासवदत्ता की

---

[1]कवीनामगलर्द्दपो नूनं वासवदत्तया ।
शक्तयेव पाण्डुपुत्रानां गतया कर्णगोचरम्—हर्ष चरिते

[2]सुबन्धुर्वाणभट्टश्च कविराज इति त्रयम् ।
वक्रोक्ति मार्गनिपुणा- श्चतुर्थो विद्यते नवा ॥ राघवपाण्डवीये ।

[3]सरस्वतीदत्तकरप्रसादश्चक्रे सुबन्धुस्सुजनैकबन्धुः
प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रबन्ध विन्यासवैदग्ध्यनिधिर्निबन्धम् ।
वासवदत्ता मंगलाचरणे 13

कल्पित कथा है। राजकुमार कन्दर्पकेतु ने स्वप्न में वासवदत्ता का दर्शन किया और वह उसे मिलने के लिए चल पड़ा। राजकुमारी ने कन्दर्पकेतु का स्वप्न में दर्शन किया और वह उस पर मुग्ध हो गई। वासवदत्ता ने अपनी दासी को कन्दर्पकेतु का पता मालूम करने को भेजा। उसे कन्दर्पकेतु मिला और वह वासवदत्ता की नगरी में आया और उसे भगा ले गया। वासवदत्ता के पिता की सेना ने उनका पीछा किया। वह दोनों एक निषिद्ध उपवन में पहुंचे वहां पर वासवदत्ता पत्थर के रूप में परिवर्तित हो गई इस पर कन्दर्प केतु आत्महत्या पर उतारू हुआ इतनेंमें आकाशवाणी हुई कि तुम्हारा मिलन अपनी प्रिया से फिर होगा अतः आत्महत्या न करो उसने उसी उपवन में दुःखमय समय विताया। एक दिन उसने अकस्मात् उस पत्थर को छुआ और उससे वह वासवदत्ता जीवित हो उठी तब दोनों का पुनर्मिलन हुआ।

सुबन्धु को कुछ विद्वान् काश्मीरी और कुछ मध्यदेशीय मानते हैं इसकी रीति गौड़ी है इस पर जगद्धर की तत्त्वदीपिनी, रामदेव की तत्त्वकौमुदी और शिवराम का काञ्चनदर्पण प्रसिद्ध हैं।

बाण ई० 640

बाण अकेला संस्कृतिसाहित्य का ऐसा कवि है जिनके जीवन के विषय में हमें पर्याप्त जानकारी मिलती है। बाण ने स्वयं हर्ष चरित के प्रथम तीन उच्छ्वासों तथा कादम्बरी की प्रस्तावना के पद्यों में अपना परिचय दिया है यह वत्सगोत्र के ब्राह्मण थे तथा इनके एक पूर्वज का नाम कुबेर था। कुबेर कर्मकाण्डी तथा श्रुति

---

० गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति—वामनः

शास्त्र सम्पन्न ब्राह्मण थे इनकी विद्वत्ता का परिचय देते हुए बाण ने बतलाया है कि अनेकों छात्र इनके यहां यजुर्वेद तथा सामवेद का पाठ किया करते थे और पाठ करते समम वे स्थान २ पर ग़लत उच्चारण करने के कारण घर में पाले हुए पिंजरों में बैठे हुए शुक सारिकाओं के द्वारा टोक दिये जाते थे[1] इन्हीं कुबेर के 4 पुत्र थे। अच्युत, ईशान, हर तथा पाशुपत । पाशुपत के पुत्र अर्थपति थे। अर्थपति के 13 पुत्र उत्पन्न हुए उनमें आठवें चित्रभानु थे। वाण इन्हीं चित्रभानु के इकलौते पुत्र थे इन की माता का नाम राजदेवी था बाण की माता का देहांत बचपन में हो गया उनके पिता की मृत्यु 14 वर्ष की अवस्था में हो गई पिता की मृत्यु के बाद बाण स्वतन्त्र प्रकृति के हो गये अवारा लोगों के साथ इनकी संगति हो गई उन में चोर, जुआरिये, ठग्ग, बदमाश, धूर्त डाकू, विद्वान, मूर्ख, कलाकार, नशेबाज सभी प्रकार के लोग शामिल थे इन तरह तरह के दोस्तों के साथ बाण ने अनेकों देशों का पर्यटन किया, बाद में घर लौट कर उन्होंने विद्याध्ययन किया और अपनी कुलोचित स्थिति को प्राप्त किया। सोननदी के किनारे प्रीतिकूट नामक ग्राम के वासी थे। हर्षवंधन के चचेरे भाई कृष्ण ने बाण को पत्र भेज कर बुलाया। बाण दूसरे दिन राजद्वार पहुंच कर वे सभा में गये हर्ष ने उन्हें देख कर पूछा (क्या यही बाण है) और फिर अपने पीछे बैठे हुए मालवराजपुत्र से कहा (महानयं विटः) यह बड़ा धूर्त है. बाण ने इसे सुन कर कहा, स्वामिन संसार में लोगों का स्वभाव विचित्र होता है इस लिये सज्जनों को सदा यथार्थवादी होना चाहिये यदि मैं सचमुच दोषी हूं तो महाराज मुझे ऐसा कह सकते हैं. बिना किसी कारण

---

1 जगुर्गृहेऽभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः ससारिकैः पंजरवर्तिभिः शुकैः,
निगृह्यमाणा वटवः पदे पदे यंजूषि सामानि च यत्र शंकिताः ।।
कादम्बरी पद्य 12

मुझे धूर्त समझना ठीक नहीं है, मैं ब्राह्मण हूं मैंने सांग वेदों का अध्ययन किया है फिर महाराज ने मुझे धूर्त कैसे पाया, महाराज स्वयं समय पर मेरी वास्तविकता जान जायेंगे, हर्ष ने केवल यही उत्तर दिया मैंने ऐसा सुना था। वाण को राज सभा में कोई आदर न मिला वह बड़े दु:खी हुए पर बाद में हर्ष की सभा में उनका बड़ा आदर हुआ और वह हर्ष के सभा पंडित बन गये ।

सूर्य्यशतक या मयूरशतक के रचियता मयूर कवि किंवदन्ती के अनुसार बाण के श्वशुर थे सूर्य्यशतक और चण्डीशतक के सम्बन्ध में एक घटना सुनी जाती है वह यह कि एक बार मयूर अपने जामाता से मिलने के लिये प्रात:काल उसके घर गये। बाण की पत्नी रात भर से नाराज़ थी बाण उसको प्रसन्न करने के लिये एक पद्य बना रहे थे जिसके तीन चरण तो बन गये पर चौथा चरण न बन पाया मयूर ने यह तीनों चरण सुने और चट से चौथा चरण बना दिया [1] पद्य का अर्थ यह है रात बीत चुकी है क्षीण कांति चन्द्र जैसे मंद होता जा रहा है यह दीप भी जैसे नींद के वश होकर तंद्रित हो रहा है। रमणियों का मान तभी तक बना रहता है जब तक उनकी मनौती नहीं की जाती मैं तुम्हें प्रणाम कर कर मना रहा हूं पर फिर भी तुम क्रोध नहीं छोड़ती ऐसा प्रतीत होता है हे चण्डि तुम्हारा हृदय भी इसलिये कठोर हो गया है कि वह कठोर स्तनों से संबद्ध है। मयूर के मुख से चतुर्थ पंक्ति को सुन कर बाण क्रुद्ध हो गये उन्होंने मयूर को शाप दिया कि वह कोढ़ी हो जाये

---

[1] गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव,
प्रदीपोयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव ।
प्रणामान्तोमानस्तदपि न विजहाति क्रुधमहो,
स्तनप्रत्यासत्या हृदयमपि ते चण्डि कठिनम् ।।

मयूर ने भी बाण को शाप दे दिया। कहा जाता है कि मयूर ने शाप की निवृत्ति के लिये सूर्य्य की स्तुति में सूर्य्यशतक की रचना की और सूर्य की कृपा से उसका कोढ़ दूर हो गया बाण ने भी अपने शाप को मिटाने के लिये चण्डीशतक की रचना की इसमें सौ श्लोक स्रग्धरा छंद में है। बाण की 3 कृतियां हैं। हर्षचरित 2 कादम्बरी और 3 देवीशतक। बाण के नाम के साथ पार्वती-परिणय नामक नाटक को भी जोड़ा जाता है जो बाण की रचना न होकर वामनभट्टबाण की रचना है जिसका समय 17 शताब्दी माना जाता है इसके अतिरिक्त नलचम्पू की टीका में चण्डपाल ने बाण के एक और नाटक का उल्लेख किया मुकुटताड़ितक पर यह उपलब्ध नहीं है। हर्षचरित आख्यायिका है कादम्बरी कथा। आख्यायिका वास्तविक होती है और कथा कल्पित है[1] राजशेखर काव्यमीमांसा में इतिहास दो प्रकार का मानता है। परिक्रिया और 2 पुराकल्प। परिक्रिया जिसमें एक ही नायक हो जैसे रामायण पुराकल्प जिसमें अनेक नायक होते हैं जैसे महाभारत। हर्षचरित में 8 उच्छ्वास हैं पहले 3 उच्छ्वासों में बाण ने आत्मकथा दी है बाकी उच्छ्वासों में प्रभाकरवर्धन का जीवन हर्ष और उसके बड़े भाई राज्यवर्धन और उसकी छोटी बहिन राज्यश्री की उत्पत्ति और विकास का वर्णन है। राज्यश्री का विवाह मौखरी राजा ग्रहवर्मा से हुआ था प्रभाकरवर्धन के स्वर्गवास के बाद ही मालवा के राजा ने ग्रह-वर्मा का वध कर दिया। राज्यवर्धन ने मालवा के राजा पर आक्र-मण किया और उसका बध कर दिया किन्तु मार्ग में ही गौड़ राजा ने उसके शिविर में ही उसका धोखे से वध कर दिया

---

[1]परिक्रिया पुरा कल्पः इतिहास गतिर्द्विधा
स्यादेक नायका पूर्वा द्वितीया बहुनायका ।

हर्ष ने गौड़ राजा के विरुद्ध प्रस्थान किया किन्तु मार्ग में उसने राज्यश्री के अज्ञात स्थान पर चले जाने का समाचार सुनकर उसको ढूंढा और उसको ग्रहवर्मा के मित्र एक बौद्ध सन्यासी के निरीक्षण में रखकर गौड़ राजा की ओर प्रस्थान किया। यह कथा अपूर्णरूप से यहीं पर बाण ने समाप्त कर दी है । इस ग्रन्थ को यहीं पर अपूर्णरूप से समाप्त करने का कारण अज्ञात है। इस विषय पर यह विचार प्रस्तुत किया गया है कि हर्ष ने बौद्धों को जो आदर दिया है उसको बाण ने उचित नहीं समझा। दूसरा विचार यह है कि जब बाण यह ग्रन्थ लिख रहा था उस समय पुलकेशी द्वितीय के आक्रमण के कारण उसके आश्रयदाता हर्ष को बड़ी क्षति पहुंची थी। बाण ने इन दुर्घटनाओं का उल्लेख उचित नहीं समझा होगा। अतः उसने आगे की घटनायें नहीं लिखी । कुछ विद्वानों का यह विचार है कि बाण स्वर्गवास के कारण इसे पूरा नहीं कर सका। इसके प्रारम्भिक श्लोकों में वासवदत्ता, भट्टारहरिश्चन्द्र, सातवाहन, प्रवरसेन, भास, कालिदास, बृहत्कथा (गुणाढ्य) और आढ्यराज का वर्णन किया है । इस पर राजानक रुय्यक का रचित हर्षचरित वार्तिक और शंकर का हर्षचरित संकेत हैं।

कादम्बरी—इस कथा की नायिका कादम्बरी और नायक चन्द्रापीड़ है। इसका कथानक गुणाढ्य की बृहत्कथा से लिया गया है। इस पर 6 टीकायें हैं। बैद्यनाथ पायगुण्ड विरचित विषम पद-बृत्ति और भानुचन्द्र और सिद्धचन्द्र की टीकायें प्रसिद्ध हैं। यह दोनों गुरु शिष्य थे। पूर्व कादम्बरी पर भानुचन्द्र की टीका और उत्तर पर सिद्धचन्द्र की टीका है। [1]यह इतनी सुन्दर कथा है कि इसके पढ़ने वालों को पढ़ते समय भोजन भी अच्छा नहीं लगता । बाण की रचनायें पांचाली रीति में हैं। बाण के पुत्र भूषणभट्ट ने पिता की मृत्यु के बाद उत्तरार्द्ध कादम्बरी की रचना की।

[1]कादम्बरी रसज्ञाना माहारों न रोचते

त्रिविक्रमभट्ट ई॰ 910

यह शांडिल्य गोत्र के ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम देवादित्य और पितामह श्रीधर थे। गह राष्ट्रकूट (राठौर) राजा इन्द्रराज तृतीय के सभा पण्डित थे। इनकी राजधानी मान्यखेट (बरार) में थी। ई॰ 915 का एक शिलालेख बरार के नवसारी ग्राम से उपलब्ध हुआ है। इसमें इस राजा के राज्याभिषेक के समय सुवर्ण तुलादान में कई ग्राम ब्राह्मणों को दिये गये। यह लेख त्रिविक्रम भट्ट का लिखा हुआ है। इन्होंने नलचम्पू और मदालसाचम्पू लिखे। मदालसाचम्पू इतनी प्रसिद्धि न पा सका। [1]विद्वानों ने इसके श्लेष प्रयोग की बड़ी प्रशंसा की है। नलचम्पू अधूरा है इस पर एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि त्रिविक्रम के पिता देवादित्य किसी राजा के सभापण्डित थे। उनका पुत्र त्रिविक्रम महामूर्ख निकला। एक समय त्रिविक्रम के पिता विदेश गये हुये थे पीछे से कोई विरोधी पण्डित राजा के पास आया और कहा कि वह सभा पण्डित से शास्त्रार्थ करना चाहता है। राजा ने त्रिविक्रम के पिता को बुलाया पर वे नहीं आये। त्रिविक्रम को बड़ा कष्ट हुआ उसने सरस्वती से प्रार्थना की कि पिता के पाण्डित्य की लज्जा रखने के लिए वह त्रिविक्रम को वह शक्ति दे कि वह उस विरोधी पण्डित को परास्त कर सके। सरस्वती ने त्रिविक्रम को तब तक के लिये अमोघ पाण्डित्य दे दिया जब तक उसके पिता विदेश से लौट न आयें। त्रिविक्रम ने सभा में जाकर उस विरोधी पण्डित को सभा में हरा दिया उसके बाद त्रिविक्रम ने सोचा कि जब तक पिता विदेश से लौट कर न आयें तब तक किसी ग्रन्थ की रचना कर दूं। उसने

---

[1]प्रसन्नाः कान्तिहारिण्यो नानाश्लेष विचक्षणाः।
भवन्ति कस्यचित् पुण्यैर्मुखे वाचो गृहे स्त्रियः ॥ नल चम्पू

नलचम्पू लिखना आरम्भ किया। पिता के आने के समय तक 7 उच्छ्वास लिखे जा चुके थे। पिता के आते ही सरस्वती के वचनानुसार त्रिविक्रम पुनः मूर्ख बन गया और नलचम्पू अधूरा रह गया। श्रीहर्ष को नैषध की रचना की प्रेरणा नलचम्पू से ही मिली थी।

गद्य और पद्य मिश्रित रचना को चम्पू कहते हैं। वर्णन में गद्य का प्रयोग होता है और प्रभावोत्पादक तथा निश्चित बात के कहने में पद्य का प्रयोग होता है। इस गद्य पद्य का मिश्रण द्राक्षा और मधु के मिश्रण के समान सुन्दर है।

सोमदेव सूरी ई० 959

इनका विरचित यशस्तिलचम्पू काव्य है। यह दिगम्बर जैन था। इस काव्य का नायक यशोधर महाराज इसके परम गुरु और नेमिदेव इसके गुरु थे। इसने नेमिदेव को सकलतार्किकचूड़ामणि कहा है। सोमदेव सूरि ने अपने को गद्य पद्य जानने वाले कवियों का चक्रवर्ती कहा है। यह राठौर राजा कृष्ण तृतीय के सभा पण्डित थे। कवि ने इस काव्य की रचना गंगधारा में की थी। इसमें 8 उच्छ्वास हैं। कवि ने अपने परमगुरु यशोधर महाराज के वर्णन के साथ जैनधर्म का प्रभाव व्यक्त करने का श्लाघ्य प्रयत्न किय है। इसके श्लोक सरल और प्रसाद गुणयुक्त हैं और गद्य क्लिष्ट नहीं है तृतीय उच्छ्वास में कवि ने राजशेखर तक प्रायः सम्पूर्ण कवियों का नामोल्लेख किया है। 6 आश्वास में संक्षेप में आस्तिक और नास्तिक सब यज्ञों का मोक्ष के विषय में विचार खूब सफाई से दिखाया है। इसमें राजा मारीदत्त द्वारा किये जाने वाले यज्ञ का वर्णन है जिसमें वह अपने परिवार की इष्टदेवी को प्रसन्न करने के लिये सभी

प्राणियों का एक २ जोड़ा वलिदान के लिए तैय्यार करता है। उसने अल्प आयु के एक वालक और एक बालिका को जो कि जुड़वां उत्पन्न हुए थे वलि के लिए तैय्यार किया। उन्होंने राजा को अपने तथा उसके पूर्वजन्म की घटनायें बताईं। एक सुदत्त मुनि ने राजा को इस प्रकार के यज्ञ की निरर्थकता बताई। तब वह राजा जैन हो गया। इस पर श्रुतसागरसूरि की विरचित टीका है।

इनका दूसरा ग्रन्थ नीतिवाक्यामृत है यह कौटिल्य के अर्थशास्त्र और कामन्दकीय नीतिसार के आधार पर लिखा गया है।

धनपाल ई० 1000

इसका विरचित तिलकमंजरी नाम का गद्य कव्य है। इसके पिता का नाम सर्वदेव था। इसका कश्यप गोत्र था और विशालपुरी का रहनेवाला था इसके भाई का नाम शोभन था। सर्वदेव ने जैन धर्म की दीक्षा ले ली थी इसीलिये धनपाल भी जैन ही था। इसने स्वयं तिलकमंजरी की प्रस्तावना में कहा है कि मुंजराज ने इसको सरस्वती की उपाधि दी थी। इसने अपनी प्रस्तावना में मुंज, सिन्धुराज और भोजराज इन तीनों का वर्णन किया है इसलिये मालूम होता है कि यह कवि तीनों के समय में विद्यमान था। इसने अपना प्राकृत कोष 'पाइयलच्छीनाममाला' मुंज के समय में रचा था। जैनदीक्षा के बाद इसने 50 श्लोकों में ऋषभदेव की स्तुति 'ऋषभपंचाशिका' की रचना की। बाण की कादम्बरी का अनुकरण कर इसने तिलकमंजरी गद्यकाव्य की रचना की। जैन मेरुतुंगाचार्य्य ने इसे भोजराज का सभा पण्डित कहा है।

तिलकमंजरी यह कथा है इसमें कोई भी उच्छ्वासादि विभाग नहीं है। तिलकमञ्जरी इसकी नायिका और समरकेतु इसका नायक

है। यह कादम्बरी का अनुकरण है। इसकी प्रस्तावना में अनेक श्लोक हैं इसकी प्रस्तावना में प्रायः सभी पण्डितों की प्रशंसा की गई है इसकी कोई टीका उपलब्ध नहीं होती

वादीभ सिंह ई० 1000

इसका विरचित 'गद्यचिन्तामणि' यह गद्य काव्य है यह दिगम्बर जैन भिक्षु था। इसके गुरु का नाम पुष्पसेन था इसका दूसरा नाम उदयदेव था। यह प्रतिवादी रूपी हाथियों के लिये सिंह के समान थे इसलिये इनका नाम वादीभसिंह पड़ा। यह मद्रास प्रान्त के दक्षिण में किसी ग्राम का निवासी था। गद्यचिन्तामणि में जीवनधर की कथा का वर्णन है जो जैन पुराण से ली गई है इसका कथानक कादम्बरी के कथानक के समान है।

नारायण ई० 1000

इसका विरचित हितोपदेश नाम की पुस्तक है यह बंगाल का निवासी था और बंगाल के किसी [1]धवलचन्द्र राजा का सभा पण्डित था इसमें रविवार को भट्टारकवार कहा है और उस दिन को अनध्याय का दिवस माना है Fleet महोदय मानते हैं कि रविवार को अनध्याय दिवस मानने का प्रचार 900 ई० से पूर्व भारत में नहीं था। इसमें बंगाल के तान्त्रिकों में प्रचलित गौरीपूजा पद्धति का

---

[1]श्रीमान् धवमचन्द्रोसौ जीयान् माण्डलिको रिपून्।
येनायं संग्रहो यत्नाल्लेखयित्वा प्रचारितः ॥

निर्देश मिलने से रचयिता बंगाल निवासी था ऐसा अनुमान होता है । ग्रन्थ के आरम्भ में शिव का मंगलाचरण है इसलिये वह शैव था ।

हितोपदेश यह गद्यपद्यात्मक कथा है । कवि ने स्वयं कहा है कि पञ्चतन्त्र तथा अन्य ग्रन्थों के आधार पर इसकी रचना की गई है । इसमें 4 विभाग (1) मित्रलाभ (2) सुहृद्भेद (3) विग्रह (4) और सन्धि हैं । यह चार भाग नीति के उपाय चतुष्टय अर्थात् साम, दाम, भेद और दण्ड इनका बालकों को सरलता से ज्ञान होने के लिये कथा रूप से वर्णित है । इस नारायण के विरचित अनेक श्लोक हैं जिससे उसकी कवित्वशक्ति प्रकट होती है । इसका भी पञ्चतन्त्र के समान अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है ।

सोड्ढल ई० 1026

इसकी विरचित उदयसुन्दरी कथा है । इसने स्वयं इस ग्रन्थ में अपने चरित्र के विषय में कहा है जिससे मालूम होता है कि यह गुजरात के दक्षिण भाग में नर्मदा के प्रवाह से परिपूत लाट देश में पैदा हुआ था । यह शैव मतावलम्बी कायस्थ था । इसने अपना वंश संबंध शिलादित्य के भ्राता कलादित्य से जोड़ा है । इस कलादित्य को शिवजी का गण कायस्थ मानकर इसने उसकी भूरि प्रशंसा की है कलादित्य वलभिवंश के कायस्थ कुल का संस्थापक था । सोड्ढल यह चण्डपति का प्रपौत्र, सोल्लपेय का पौत्र और सूर का पुत्र था । बाल्यावस्था में ही इसका पिता मर गया । इसके मामा गंगाधर ने इसका पालन-पोषण किया इसके गुरु का नाम चन्द्र था । अध्ययन के बाद लाट देश को छोड़ कर यह कोंकण की राजधानी में चला गया वहां पर यह राजपण्डित नियुक्त हुआ था । इसके समय में वहां

छित्तिराज, नागार्जुन और मुन्मुनिराज तीन सगे भाई राजाओं ने क्रम से शासन किया था। लाट देश के राजा वत्सराज ने भी इसको अपने दरबार में बुलाकर बड़ा आदर किया था।

उदयसुन्दरी यह कथा गद्य व पद्य में है। इसमें ८ उच्छ्वास हैं। प्रारम्भ में हाल, युवराज, वाक्पतिराज, अभिनन्द, बाण प्रभृति कवियों का वर्णन है। प्रथम उच्छ्वास में कवि ने अपना वंश वर्णन किया है द्वितीय उच्छ्वास में कथा आरम्भ होती है। इस कथा की नायिका नागलोकाधिपति शिखण्डतिलक की कन्या उदयसुन्दरी है और नायक प्रतिष्ठान नगर का राजा मलयवाहन है। इसमें बाण की कादम्बरी का अनुकरण स्पष्ट दिखाई देता है। इसकी उत्प्रेक्षा शैली विशिष्ट प्रकार की है। इस ग्रन्थ की समाप्ति लाट देश के राजा वत्सराज के समय में हुई।

सोमदेवी ई० 1066

इसका विरचित कथासरितसागर ग्रन्थ है। सोमदेव के पिता का नाम रामदेव भट्ट था। इसका जन्म राजा अनन्त के समय काश्मीर में हुआ था। यह क्षेमेन्द्र का समकालिक था। क्षेमेन्द्र की बृहत्कथा-मंजरी बहुत संकुचित देखकर राजा अनन्त की परम विदुषी रानी सूर्य्यंवती ने सोमदेव को इस तरह का विस्तृत ग्रन्थ निर्माण करने के लिये प्रोत्साहित किया। अनन्त राजा के पुत्र कलश के गद्दी पर आने के बाद ही इसकी रचना पूर्ण हुई। इसने ग्रन्थ के आरम्भ में शिव की स्तुति की है इससे मालूम होता है कि वह शैव था।

कथासरितासागर यह एक पद्य में विरचित कथा ग्रन्थ है। इसमें 18 लम्बक और 124 तरंग हैं। यह ग्रन्थ प्रायः अनुष्टुप छन्द में है केवल तरंगों के अन्त में कुछ अन्य छन्दों के श्लोक हैं। इसकी श्लोक

संख्या 21388 है । यह ग्रन्थ गुणाढ्य की बृहत्कथा के आधार पर रचा गया हैं। इसके पढ़ने से उस समय काश्मीर की अवस्था का पता चलता है।

माधावचार्य सन्यासी होने पर विद्यारराय ई० 1400

इसका विरचित 'शंकरदिग्विजव' नामका कथा ग्रन्थ है। 'माधवाचार्य्यं' यह नाम न होकर उनके सन्यासाश्रम का नाम विद्यारण्य दिया है। दाक्षिणात्य विद्वानों में शंकराचार्य्यं के बाद उनके समान विद्यारण्य ही माने जाते हैं। यह और इनका छोटा भाई 'सायण' दोनों विजयनगर के बुक्क और हरिहरराय के सभा पण्डित और मन्त्री थे। यह सर्व शास्त्रों का विद्वान ही नहीं किन्तु बड़ा भारी राजनीतिज्ञ और विजय नगर राज्य का संरक्ष भी था। बुक्क और हरिहरराय का शासन 1400 शतक में था। ई० 1386 में विद्यारण्य की 90 वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। ई० 1377 में इसने सन्यास ग्रहण कर श्रृंगेरी मंठ के शंकराचार्य्यं की गद्दी विभूषित की थी। इसके तीन गुरु थे (1) विद्यातीर्थं (2) भारतीतीर्थं (3) और श्रीकण्ठ। इनके सब ग्रन्थों में विद्यातीर्थं की बन्दना मिलती है। यह अपने को नवकालिदास कहते थे इनके पिता का नाम मायण और माता का नाम श्रीमती था। सायण और भोगंनाथ इनके छोटे भाई थे यह कृष्ण यजुर्वेदी बौधायण शाखा का [1]भारद्वाज गोत्री था इसने स्वयं अनेक ग्रन्थ रचे। यह अद्वैत-वैदांत

[1]श्रीमती जननी यस्य सुकीर्तिर्मायणः पिता ।
सायणो भागनाथश्च मनोबुद्धो सहोदरौ ॥
यस्य बौधायणं सूत्रं शाखा यस्य च याजुषी ।
भारद्वाजकुलं यस्य सर्वज्ञः स हि माधवः ॥

पराशरमाधवीय भूमिका श्लोक 67

वा शंकरवेदांत का भारी आचार्य्य माना जाता है इसके विरचित वेदान्त की पंचदशी और विवरणप्रमेयसंग्रह, धर्मशास्त्र के कालमाधव और पराशरमाधवीय, मीमाँसा मा जैमिनी न्यायमालाविस्तर, व्याकरण की माधवीया-धातुवृत्ति और एकाक्षर रत्नमाला कोष ये ग्रन्थ हैं।

सायण भारी वैदिक था। इसके और इसके आश्रित पण्डितों के विरचित चार वेद, सब ब्राह्मण ग्रन्थ और आरन्यक ग्रन्थों पर किये सब भाष्य प्रसिद्ध हैं।

शङ्करदिग्विजय—इसमें आदि शंकराचार्य्य की कथायें वर्णित हैं इसका मूल ग्रन्थ आनन्दगिरि विरचित शङ्करविजय ग्रन्थ था ऐसा इसके प्रारम्भ के श्लोक से प्रतीत्त होता है। महाकाव्य के समान इसमें 16 सर्ग हैं। इसकी कथायें अनेक छन्दों के श्लोकों में है। श्लोकों की संख्या 1843 है। इसकी भाषा विद्वत्ताप्रचुर तथा प्रौढ़ है किन्तु कथा के कारण अलङ्कारों से कम विभूषित है काव्य के गुण भी इसमें विद्यमान है इस पर धनपति सूरि की डिण्डिम जीका बड़ी प्रसिद्ध है।

वेंकटाध्वरी ई० 1640

इसका विरचित विश्वगुणादर्श चम्पू है यह रामानुज मतानुयायी महाकवि महालक्ष्मी का उपासक था। इसके पिता का नाम रघुनाथ दीक्षित और माता का नाम सीता था। यह काञ्चीपुर के पास अर्शन-फल नाम के अग्रहार में रहता था।

विश्वगुणादर्शचम्पू—यह चम्पू काव्य बहुत ही वित्तृत है इसमें भारत के अनेक आश्रम, नगर, आचार्य्य, नदियाँ, देश और लोग वा

उनकी रीति आदि का वर्णन है इसमें 53 प्रकरण हैं कवि का भाषा प्रभुत्व इसमें पूर्णतया व्यक्त है इसका सब वर्णन कवि का अपना अनुभव है इस चम्पू पर सुब्बाशास्त्री की विरचित भावदर्पण नाम की टीका और बालकृष्ण विरचित पदार्थचन्द्रिका टीका मुद्रित हैं। दूसरा 'लक्ष्मी सहस्र" स्तोत्र है जो कवि ने एक ही रात में बनाया था।

अम्बिकादत्त व्यास ई० 1858 से 1900

गद्य साहित्य में सबसे अन्तिम उपलब्धी अम्बिकादत्त व्यास विरचित शिवराजविजय की है इसमें शिवाजी का वर्णन है । किस प्रकार दक्षिण में उन्होंने मुसलमानी शासकों का मुकाबला कर उन्हें परास्त किया। भारत सम्राट औरंगज़ेब के भी बुरी तरह से दांत खट्टे किये और हिन्दुराज्य की स्थापना की इसका वर्णन है । गद्य रचना में व्यास जी सुबन्धु और बाण से कम नहीं थे उनकी इस कृति का प्रकाशन 1901 ई० में हुआ था व्यास जी की जन्मभूमि वाराणसी थी

रघु प्रेस, जोगीवाड़ा, नई सड़क, दिल्ली।